॥ ओ३म् ॥

ऋषि-दर्शन

लेखक : पं॰ चमूपति, एम॰ ए॰

महर्षि दयानन्द सरस्वती के
128वें बलिदान वर्ष

पर

स्व. श्रीमति विद्यावती पन्ना लाल खोसला
की पुण्य समृति में खोसला परिवार की ओर से

सादर भेंट

-: प्रकाशक :-

अशोक आर्य — प्रधान
नरेन्द्र आर्य — मन्त्री
सुदर्शन नासा — कोषाध्यक्ष

आर्यसमाज, भीम नगर

।। ओ३म् ।।

ऋषि – दर्शन

जन्म व शिवरात्रि

ऋषि दयानन्द की जन्म भूमि होने का गौरव गुजरात प्रान्त को है। पिता जन्म के ब्राह्मण थे, और भूमिहारी तथा जमीदारी का कार्य करते थे। शिव के बड़े भक्त थे, शिवरात्रि के दिन बालक को मन्दिर ले गए और उसे उपवास करा जागरण का आदेश दिया। जब बड़े-बड़े शिव-भक्त सो गए, यह भावी ऋषि प्रयत्न पूर्वक जागता रहा।

गीता के कथनानुसार :-

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।

इनके हृदय में भक्ति का नया सूर्य उदय हुआ था। यह इसी रात में शिव को रिझा देना चाहते थे। नींद आती पर यह पानी की छींटों से उसे दूर भगाते। इतने में एक चूहे ने सचेत किया। उस क्षुद्रपशु की महान पशुपति के आगे उद्धत होता देखकर विचार आया हो न हो यह शिव नहीं। दूसरों का व्रतभंग आलस्य ने किया था इनका तर्क ने। तर्क जीवन की भूमिका था, आलस्य मौत की! शिवरात्रि बीत गई, परन्तु शिवरात्रि की घटना हृदय में गड़ सी गई।

मृत्यु के दृश्य

मूलशंकर के बढ़ते यौवन को दूसरी चेतावनी अपने चाचे और भगिनी की मृत्यु से मिली। चाचे के लाडले थे, उनका वियोग सहा न जाता था भगिनी को महामारी ने मारा। इन दो मृत्युओं का प्रभाव एक सा नहीं हुआ। प्रथम मृत्यु पर आश्चर्य चकित रहे और पाषाण हृदय की उपाधि पाई, दूसरी पर बिलख-2 कर रोए।

शिक्षा व ग्रहत्याग

मूलशंकर की शिक्षा का प्रबन्ध इनके बाल्यकाल में किया गया था। इन्हें यजुर्वेद कण्ठस्थ था और भी बहुत कुछ पढ़ा पिता को पता लगा कि बालक पर वैराग्य का भूत सवार है। महात्मा बुद्ध के पिता की तरह इन्हें विवाह के डोरों में फांसने की ठानी परन्तु ठीक विवाह की रात्रि को मूलशंकर घर से लुप्त हो गये।

वन-यात्रा

मूलशंकर की वनयात्रा की कथा बहुत लम्बी है। पहले तो किसी ने ठग लिया। इन्हें शुद्ध चेतन नाम देकर नैष्ठिक ब्रह्मचारी बनाया। फिर यह सन्यासी हुए और दयानन्द नाम पाया। योगियों के पास योग साधन सीखते रहे। समाधि का आनन्द लाभ किया। गिरिगुहाओं में घण्टों बिताए। पुस्तकें खोजीं और उनका अध्ययन किया। मैदानों में सोए, वृक्षों की शाखाओं में विश्राम किया। मूल कन्द खाकर भूख मिटाई। सार यह कि पूर्ण बनचर का सा जीवन व्यतीत किया।

गुरू विरजानन्द के चरणों में

36 वर्ष से ऊपर के थे जब दंडी विरजानन्द के द्वार पर विद्या-वित्त के भिक्षु हुए। वहाँ पहली भेंट यह धरनी पड़ी की जो पुस्तक पढ़े हैं सब यमुना मैया को अर्पण करो। हाथ लिखे पुस्तक बड़ी कठिनता से हाथ आते थे। पर गुरू-मुंख का उपदेश भी तो सुलभ न थी। जी कड़ा किया और गुरू की आज्ञा पालन की। आदर्श शिष्य आदर्श गुरू के चरणों में आदर्श शिक्षा प्राप्त कर रहा था। नित्य प्रति यमुना के जल से गुरूजी को स्नान कराते। कुटी में झाड़ू

देते। सेवा शुश्रुषा करते। गुरू ने एक दिन डण्डे से ताड़ाना की, यति-वर ने गुरू-गौरव का प्रसाद मान स्वीकार की। अन्त में दीक्षान्त का समय आया। निर्धन ब्रह्मचारी गुरूदक्षिणार्थ लोगों की भीख माँग लाया। हा दैव! स्वीकार न हुई। "क्या भेंट धरूं?" जो तुम्हारे पास हो,। "मेरे पास अपने सिवा कुछ नहीं"। "तो अपना आप भेंट धरो" भेंट धरी गई। गुरू ने अंगीकार की। "वही आपकी भेंट मानो आर्य समाज की स्थापना का प्रथम बीज थी। दयानन्द विरजानन्द का हुआ और विरजानन्द के हाथों सारे संसार का।

पाखण्ड-खण्डनी

अब पुष्कर के मेले में दयानन्द पहुंचता है, कुम्भ के महोत्सव में दयानन्द गरजता है। वेद से उलटे जाते वैदिक धर्मियों को वेद के पथ पर लाना चाहता है। एक ओर सारी भ्रान्त आर्य जाती है, दूसरी ओर अकेला दण्डकारी दयानन्द। "पाखण्ड-खण्डनी पताका" के नीचे खड़ा कौपीनधारी ब्रह्मचारी आते जाते के लिए अचम्भा था। लोग कहते थे, गंगा के प्रवाह को रोकने का सामर्थ्य इसमें कहाँ? स्वयं भागीरथ आएं तो न रोक सकें।

तपस्या की पराकाष्ठा

ऋषि गरज गरज कर हार गए। गंगा बहती गई और उसके साथ हिन्दू भ्रान्तियों का परिवार बी बहता गया। ऋषि ने डेरा डण्डा उठाया और वनों की राह ली। पूर्ण वीतराग होने का व्रत किया कि कौपीन के अतिरिक्त कोई चीज़ पास न रखेंगे। महाभाष्य की एक प्रति पास थी, सो भी गुरूवर की सेवा में भेज दी। इसी कौपीन में दयानन्द सोते, इसी में फिरते। नहाकर इसे सूखने को डालते और

स्वयं पद्मासन लगा कर बैठ रहते। हिमाच्छन्न नालों में क्या और जलती रेतों पर क्या दयानन्द का यही पहरावा रहा।

शास्त्रार्थ

कोई दो वर्ष तक दयानन्द ने इस प्रकार तितिक्षा में काटे फिर प्रचार में प्रवृत हुए। शास्त्रार्थ पर शास्त्रार्थ करते चले गए। हीरा वल्लभ नाम के एक प्रौढ़ पण्डित ने सप्ताह भर संस्कृत में शास्त्रार्थ किया। उनका संकल्प था कि ऋषि से मूर्ति को भोग लगवा कर उठूँगा। ऋषि का पक्ष सुनकर ठाकुर जी को उठाकर गंगा में प्रवाहित किया और मुक्तकंठ से माना कि मूर्ति पूजा शास्त्र के विरूद्ध है।

ऋषि के उपदेश में जादू था। कंठियां उतरवादीं, मूर्तियां फेंकवादी, तिलक छाप की रीति मिटा दी। गायत्री का प्रचार किया संध्या लिख-लिख कर बांटी। स्त्रियों को मंत्रजाप का अधिकार दिया। जाटों राजपूतों को यज्ञोपवीत पहनाए।

आर्य धर्म की जय

चान्दपुर के शास्त्रार्थ में ऋषि ने आर्य जाति के इतिहास में एक नए युग का बीजारोपण किया आर्य आर्य तो आपस में विवाद करते ही थे। मुसलमानों ईसाईयों से इनकी कभी न ठनी थी। इस से पूर्व प्रथा यह थी कि अहिन्दू हिन्दुओं का खंडन करें और हिन्दू चुप रह कर सहन करते जाएं। आर्य धर्म आटे का दिया था। कच्चा तागा था, ऋषि ने इस भ्राँति को मिटा दिया। तीन दिन बाद होना था जिसमें मौलवियों और पादरियों के विरूद्ध ऋषि ने आर्य धर्म का पक्ष लेना स्वीकार किया था। एक ही दिन में ऋषि ने आर्य धर्म की

स्थापना ऐसी दृढ़ता से की कि दूसरे दिन वहाँ प्रतिपक्षियों का चिन्ह मात्र भी शेष न था। आर्य धर्म की यह विजय धर्म के इतिहास में स्वर्णअक्षरों में लिखने योग्य है।

अन्य मतों पर कृपा

ऋषि ने ईसाईयों को निमन्त्रण दिया, मुसलमानों को निमन्त्रण दिया कि आर्य धर्म को परखो और स्वीकार करो इस निमन्त्रण में मोहिनी शक्ति थी। सर सैयद ऋषि के चरणों में आते। पादरी ऋषि के दर्शन करते। पादरी को ऋषि "भक्त स्काट" कहते। "भक्त" की अनुपम उपाधि किसी आर्य समाजी को न मिली, एक ईसाई ऋषि भक्ति का अपूर्व प्रसाद ले गया। मुहम्द उमर जन्म का मुसलमान था उसे स्वामी ने अपने हाथों आर्य बनाया और अलखधारी नाम रखा। सारे संसार के लिए आर्य धर्म का द्वार खोलने का श्रेय वर्तमान युग में स्वामी दयानन्द ही को है। कर्नल अल्काट और मैडमब्लवैटस्की अमेरिका से चल कर स्वामी दयानन्द के चरणों में आए। अपने पत्रों में ऋषि को "गुरूदेव" कह कर सम्बोधित करते थे।

बन्धन काट डाला

एक दिन एक ब्राह्मण ने पान का बीढ़ा ला दिया। चबाने से प्रतीत हुआ इसमें विष है। ऋषि उठें गंगा पास थी, उस पर जाकर न्योली कर्म किया और विष निकाल दिया। सैयद मुहम्मद तहसीलदार था उसने दोषी को पकड़वाया और दयानन्द के दरबार में ले गया। ऋषि से सहा न गया कि किसी को उनके कारण बंधन में डाला जाए। क्या दया पूर्ण उत्तर दिया, "मेरा काम बंधन काटना है, बंधन बढ़ाना नहीं"।

बाल ब्रह्मचारी के बल

ऋषि जिस धर्म का प्रचार करना चाहते थे वह उनके जीवन में मूर्त रूप में विद्यमान था। दयानन्द का सबसे बड़ा बल ब्रह्मचर्यबल था। बाल ब्रह्मचारी को अधिकार था कि व्यभिचारियों को डाँटे। विक्रमसिंह ने ब्रह्मचर्यबल का प्रमाण चाहा तो उसकी दो घोड़ों की गाड़ी एक हाथ से पकड़ कर रोक दी। साईस बल लगाता है, घोड़े यत्न करते है, परन्तु गाड़ी हिलने में नहीं आती। पीछे की ओर देखा ऋषिवर गाड़ी रोके खड़े हैं। शरीर से तेज बरसता है। मुख कान्ति टकटकी लगाकर देखी नहीं जाती।

देवी पूजा

ब्रह्मचारी है और देवियों का आदर करता है। एक नन्ही लड़की को बालकों के साथ खेल रही है ऋषि देखते ही सिर झुका देते है। देखने वालों को धोखा है कि सामने खड़े वृक्ष को प्रमाण किया है, देवता-निन्दक को देवता की परोक्ष शक्ति ने देवता पूजक बताया है। ऋषि के मुख से सुनना ही था कि "वह देखो"! वह नन्ही बालिका मूर्त मातृ शक्ति है, बस! सभी के मुख से निकला "धन्य! धन्य!! देवियों के सत्कार स्वरूपबाल ब्रह्मचारी दयानन्द! धन्य इस एक धटना में दयानन्द के देवियों के प्रति संपूर्ण भावो का मूर्त चित्र चित्रित है। देवियों की शिक्षा हो और शिक्षा के साथ पूजा हो यह सूत्र ऋषि के देवी सम्बन्धी सिद्धान्त का सार है।

अछूत कोई नहीं

दयानन्द की दृष्टि में कोई अछूत न था। उमेदा नाई खाना लाया तो भरी सभा में स्वीकार किया। भक्त की भावना गेहूँ के आटे

से गुंधी थी, जो भक्त वत्सल की दृष्टि में लाख जन्माभिमानों की अपेक्षा अधिक सम्मान के योग्य थी। कसाई (महजबी सिख) को किसी ने व्याख्यान सभा से हटाया। कहा, "नहीं"! मेरा व्याख्यान कसाईयों के लिए है।

क्या आप जानते है कि सबसे पहला मलकाना रूस्तम सिंह किन शुभ करकमलों द्वारा पुनीत यज्ञोपवीत से अंलकृत हुआ था? ऋषि दयानन्द की दयाबल बली भुजाओं ने उसे अस्पृश्यता की गहरी गुहा से उठाया और आर्यत्व के पुण्य शिखर पर बैठाया था।

गो रक्षा

ऋषि का करूणाक्षेत्र मनुष्य जाति तक परिमित नहीं था। प्राणिमात्र दयानन्द की दया के पात्र थे। ऋषि ने गो-रक्षा के लिए भरसक प्रयत्न किया। एक निवेदन पत्र पर हिन्दू, मुसलमान, ईसाई सब के हस्ताक्षर कराए कि गो हत्या राजनियम से बन्द की जाए। ऋषि ने अपने नाम को सार्थक किया, जब दातारपुर के बाहर सड़क पर जाते हुए एक बैल गाड़ी कीचड़ में धंसी देखी। गाड़ीवान का और बस न चलता बैलों पर कोड़े बरसाता चला जाता था। बैलों ने बहुतेरी गर्दिनें हिलाई, कंधों पर बहुतेरा दबाव डाला, पर गाड़ी न खिची। गाड़ीवान हार कर रह गया। ऋषि को अधिक दया गाड़ीवान पर आई या बैलों पर यह कहना कठिन है। दोनों के हृदय कृतज्ञताभार से आभारी थे जब राजों महाराजों के गुरू लोकमान्य दयानन्द ने स्वंय कीचड़ में उतर बैलों का जुआ अपनी गर्दन पर डाला और जो भार दो बैलों से न खींचा था, अकेले अपने भुजाबल से जोहड़ से बाहर कर दिया।

ऋषि की लीला बहुपक्षी लीला है। जिस पक्ष पर दृष्टि डालो

वही कहता है, मैं सबसे मीठा हूँ। वस्तुतः गुड़ जहाँ से खाओ मीठा लगता है। इस लीला के अवसान में भी वह महत्व है जो और मनुष्यों के जीवन में नहीं।

प्रचार की धुन

ऋषि दयानन्द ने अन्तिम यात्रा जोधपुर की ओर की इस समय तक ऋषि ने बीसयों आर्य समाजों की स्थापना कर ली थी। पंजाब, पश्चिमोत्तर (वर्तमान संयुक्त) प्रान्त राजपूताना, यह सब प्रदेश चरणों में सिर झुका चुके थे। कितने राजपूत नरेश शिष्य बन चुके थे। जोधपुर में भी महाराज ने बुलाया था। चरण सेवकों ने विनय की, वहाँ के लोग क्रूर स्वभाव के पुरूष है, आप की "शिक्षा" का गौरव नहीं समझेंगे। संभव है प्राणों के बैरी हो जाएं। दयावीर दयानन्द ने उत्तर दिया-"जभी तो जाता हूँ। बिगड़े के सुधार की और अधिक आवश्यकता है। रही मेरे प्राण-घात की बात, सो तो यदि मेरी उंगली-2 से बती का काम लिया जाए, और इसी से किसी को सीधा रास्ता सूझ जाए तो मेरे जीवन का प्रायोजन इसी बात में सिद्ध हो गया। कहने की आवश्यकता नहीं कि स्वामी के पहुँचते ही राजा चरणों का भक्त हो गया, प्रजा अनुराग रक्त हो गई। प्रतिदिन आनन्द वर्षा होने लगी।

निर्भयता

एक दिन राजा ने महाराज को अपने डेरे पर निमंत्रित किया ऋषि बिना सूचना दिए वहाँ जा पहुंचे। राजा के दरबार में उसकी प्यारी वेश्या नन्ही जान आई हुई थी। राजा खिसियाने हुए उसे पालकी में बैठा तो दिया परन्तु ऋषि से आँखे चार न हो सकी।

ऋषि यह कुत्सित दृश्य देखकर लाल हो गए। गरजकर कहा-सिहों की गोद में कुत्तियों का क्या काम?

दया आदर्श

यह निर्भयता ऋषि के लिए भय सिद्ध हुई। विरोधियों ने दल बना लिया। कुछ दिनों में ही जगन्नाथ रसोइए को घूस देकर वीतराग योगीराज को विष दिलवा दिया। ऋषि ने उस समय भी अपनी स्वाभाविक दया से काम लिया। जगन्नाथ ने स्वंय माना, ऋषिवर! यह अपराध मुझ से हुआ है। ऋषि ने उसे धन दिया और आग्रह-पूर्वक कहा कि शीघ्र आँगल राज्य से बाहर हो जाओ जिस से तुम्हारे प्राणों पर संकट न आए।

विष का प्रभाव धीरे धीरे हुआ। दस्त आने लगे। पेट का शूल बढ़ता गया। बार बार मूर्छा होने लगी। महीना भर यह क्लेश रहा। वैद्य चकित थे कि इस वेदना में ऋषि सन्तोष पूर्वक जी रहे हैं। यह ऋषि का चमत्कार था।

देहावासन

जोधपुर से आबू और आबू से अजमेर गए। दीवाली की साँयकाल को, जहाँ घर गली बाज़ार में दीपक जलाए गए यह जाति-कुल-दीम, संसार समुद्र को ज्योति स्तम्भ देखते-देखते जगमगाती चकाचौंध से चुंध्याती रात्रि में अन्तर्हित हो गया देखने वालों ने देखा कि बुझते दीपक ने संभाल लिया। मृत्यु समय समीप आया देखकर ऋषि सचेत हुए। क्षौर कराया शरीर पोंछवाया, चनों का रस लिया, प्रभु का भजन, मन्त्रों का पाठ करते रहे। अन्त में "परमेश्वर! तैने अच्छी लीला की, तेरी इच्छा पूर्ण हो"। यह शब्द कहे

और अत्यन्त आह्लाद पूर्वक प्राण त्याग दिए।

देह छोड़ते समय दयानन्द के मुख पर एक विचित्र कान्ति थी। पूर्ण किये कर्तव्यों का सन्तोष छाती को उभारे हुए था जगज्जनक की गोदी में परमपिता का प्यारा पुत्र लालायित हृदय साथ लिए लौट रहा था। पिता की आज्ञा का पालन किया है, यह आह्लाद था, शान्ति थी, सन्तोष था।

दृष्टि रासायण

जीवन प्रचार में अर्पण हुआ था, मरण भी प्रचार का साधन हुआ! गुरुदत्त एम.ए. पंजाब यूनिवर्सिटी में प्रथम रहे थे, उनकी यह ऋषि से प्रथम भेंट थी। बातचीत नहीं हुई शंका समाधान नहीं हुआ, प्रश्नोत्तर का अवसर नहीं मिला, परन्तु चंचल, शंका का अवतार तर्क-मूर्त, गुरुदत्त ऋषि पर आसक्त है। उसे कोई सन्देह नहीं रहा, क्षणमात्र में उनकी काया पलट हो गई। एक दृष्टि ने कुछ का कुछ कर दिया।

ऋषि की दृष्टि रासायण है। आओ! उस दृष्टि के दर्शन करो। खोटा सिक्का है? लाओ, खरा सोना हो जायेगा ऋषि के जीवन के अध्ययन से शिक्षा लाभ करो। उन के ग्रंथों को पढ़ो और उनके जीवन का मिलान उनके लेखों से करो। भर्तृ हरि ने कहा है :

मनस्येक वचस्येक कर्मण्येक महात्मानाम्।

यह वाक्य ऋषि दयानन्द के महत्व का सार है।

अमर दयानन्द

आज केवल भारत ही नहीं, सारे धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक संसार पर दयानन्द का सिक्का है। मतों के प्रचारकों ने अपने मन्तव्य

बदल लिए हैं, धर्मपुस्तकों के अर्थो का संशोधन किया है, महापुरूषों की जीवनियों में परिवर्तन किया है। स्वामी जी का जीवन इन जीवनियों में बोलता है ऋषि मरा नहीं करते, अपने भावों के रूप में जीते हैं। दलितोद्धार का प्राण कौन है? पतित पावन दयानन्द। समाज सुधार की जान कौन है? आदर्श सुधारक दयानन्द। शिक्षा प्रचार की प्रेरणा कहां से आती है? गुरूवर दयानन्द के आचरण से। वेद का जय जयकार कौन पुकारता है? ब्रह्मर्षि दयानन्द। देवी सत्कार का मार्ग कौन दिखाता है? देवीपूजक दयानन्द। गोरक्षा के विषय में प्राणिमात्र पर करूणा दिखाने का बीड़ा कौन उठाता है? करूणानिधि दयानन्द।।

आओ। हम अपने आपको ऋषि के रंग में रंगें। हमारा विचार ऋषि का विचार हो, हमारा आचार ऋषि का आचार हो, हमारा प्रचार ऋषि का प्रचार हो। हमारी प्रत्येक चेष्टा ऋषि की चेष्टा हो। नाड़ी -नाड़ी से ध्वनि उठे :-

महर्षि दयानन्द की जय!

पापों और पाखण्डों से ऋषिराज छुड़ाया था तूने।
भयभीत निराश्रित जाति को, निर्भीक बनाया था तूने।।
बलिदान तेरा था अद्वितीय हो गई दिशांए गुञ्जित थी।
जन जन को देगा प्रकाश वह द्वीप जलाया तूने।।

महर्षि दयानन्द सरस्वती के 128वें बलिदान वर्ष पर शत्-शत् नमन भाव भरी श्रद्धान्जली

राम चन्द्र आर्य, भीम नगर, गुड़गांव